

इल्तुतमिश : 1210-1236

(Iltutmish)

इल्तुतमिश का आरंभिक जीवन—इल्तुतमिश भी ऐबक की तरह इल्बारी तुर्क था। उसकी आरंभिक स्थिति ऐबक के आरंभिक जीवन की तुलना में कहीं अधिक शोचनीय थी। बचपन में ही कुशाक नामक एक व्यक्ति ने उसे अपने सभी पुत्रों में सबसे अधिक उसे ही चाहा था। इसलिए उसके अन्य भाई उससे ईर्ष्या करते थे। एक दिन उसके भाइयों ने उसे बुखारा ले जा कर दास के रूप में बेच दिया। बुखारा से वह गजनी और फिर बगदाद ले जाया गया। बगदाद में वह सूफियों के संपर्क में आया। सूफी संतों के विचारों से वह अत्यधिक प्रभावित हुआ। गजनी में दासों के बाज़ार में सुल्तान मुइज़ुद्दीन शाह मुहम्मद-बिन-गोरी की नज़र उस पर पड़ी। वह इल्तुतमिश से प्रभावित हुआ। व्यापारी से क्रय कर गोरी ने इल्तुतमिश को भारत लाने का आदेश दिया। गोरी के बाज़ार में बेचने के अतिरिक्त लाभ दिया। बाद में जब कुतुबुद्दीन ऐबक ने इल्तुतमिश की खरीदने की इच्छा प्रकट की तो सुल्तान ने दासों के व्यापारी को आज्ञा दी कि वह इल्तुतमिश को दिल्ली ले जाए। दिल्ली में ही कुतुबुद्दीन ने उसे अपने दास के रूप में खरीदा।

दिल्ली में इल्तुतमिश शीघ्र ही कुतुबुद्दीन ऐबक का विश्वासपात्र बन गया। उसे सर-ए-जानदार (शाही अंगरक्षकों का सरदार) नियुक्त किया गया। इल्तुतमिश की प्रशासनिक क्षमता से प्रभावित हो कर कुतुबुद्दीन ने उसे अन्य प्रशासनिक पद भी सौंपे। उसे अमीर-ए-शिकार का पद दिया गया। 1200 ई. में वह हांसी का सूबेदार बनाया गया। अपनी योग्यता, कर्तव्यनिष्ठा और बहादुरी के कारण वह शीघ्र ही अन्य तुर्की गुलामों से आगे निकल गया। उसने खोखरों के विरुद्ध अभियान किया। इल्तुतमिश ने मुहम्मद गोरी को इतना प्रभावित किया कि जिस समय खोखरों के विरुद्ध अभियान किया, इल्तुतमिश को गुलामों से मुक्त होने का आदेश दिया। उसकी असाधारण वीरता से मुहम्मद गोरी प्रभावित हुआ और उसे दासता से मुक्त करने का आदेश दिया। फलतः 1205 ई. में इल्तुतमिश ऐबक के दासता से मुक्त कर दिया। इसके बाद उसे बदायूँ का प्रशासक नियुक्त किया गया। ऐबक ने अपनी एक पुत्री का विवाह भी उसके साथ कर दिया।

इल्तुतमिश का राज्यारोहण—कुतुबुद्दीन ऐबक की मृत्यु के पश्चात् तुर्की अमीरों ने आरामशाह को गद्दी पर बिठाया। चूँकि आरामशाह ऐबक का वंशानुगत नहीं था, इसलिए उसे तुर्की अमीरों का निष्ठा प्राप्त नहीं हुई। साथ ही वह सुस्त और अयोग्य शासक भी था। इससे अराजक तत्वों का प्रभाव था। इसलिए पूरे राज्य में अव्यवस्था फैल गई। इस स्थिति में तुर्की अमीरों ने खतरे को भाँपते हुए और जहाँज़े रानी, कुबाचा ने सिंध और मुलतान की ओर प्रस्थान किया तथा भक्कर और सिविस्तान पर अधिकार कर लिया। बंगाल में खिलजी मलिकों ने भी विद्रोह कर दिया। कुतुबुद्दीन द्वारा स्थापित नव-तुर्की राज्य टूटने के कगार पर पहुँच गया था।

ऐसी परिस्थिति में हताश अमीर अली इस्माइल तथा कुछ अन्य अमीरों और अधिकारियों की राय से इल्तुतमिश को दिल्ली का सिंहासन सँभालने के लिए आमंत्रित किया। वे बदायूँ से शीघ्र दिल्ली पहुँचने को निमंत्रण भेजा। इल्तुतमिश ने इस मौके का लाभ उठाया। वह दिल्ली की ओर चल पड़ा। आरामशाह ने इल्तुतमिश का मार्ग रोकने का प्रयास किया, परंतु युद्ध में पराजित हुआ। उसको मार कर दिल्ली पर इल्तुतमिश निर्विरोध दिल्ली पहुँच गया। उसने गद्दी पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार दिल्ली में ऐबक के वंश का शासन आरंभ हुआ।

इल्तुतमिश की समस्याएँ—यद्यपि इल्तुतमिश बिना किसी विशेष कठिनाई के सुल्तान बन गया था, तथापि उसकी समस्याएँ अभी खत्म नहीं हुई थीं। उसकी स्थिति काँटों के ताज के समान थी। इल्तुतमिश के तीन प्रमुख प्रतिद्वंद्वी थे—गजनी में यल्दूज़, सिंध में कुबाचा तथा बंगाल (लखनौती) में अली मर्दान। राजपूत शासक पुनः दिल्ली सल्तनत को चुनौती दे रहे थे। कालिंजर और ग्वालियर पहले ही तुर्कों के हाथों से निकल चुके थे। नव-स्थापित राज्य को मंगोल आक्रमण का भी खतरा था। इल्तुतमिश की आंतरिक स्थिति भी असंतोषजनक थी। तुर्की अमीरों का एक वर्ग (मुइज्जी और कुतुबी) भी इल्तुतमिश का विरोधी था। राज्य की आंतरिक स्थिति भी चिंताजनक थी। प्रशासनिक व्यवस्था पूरी तरह से ठप हो चुकी थी। राजस्व में भारी कमी हुई। बदायूँ, बनारस और कन्नौज के कर एकत्र करने में तुर्की अधिकारियों एवं राजस्व संग्रहकों को भारी कठिनाई का सामना करना पड़ा। इल्तुतमिश ने इस कार्य को पूर्ण किया। इसी कारण अनेक विद्वान भारत में तुर्की सल्तनत का वास्तविक संस्थापक इल्तुतमिश को ही मानते हैं।

इल्तुतमिश के राजनीतिक कार्य—इल्तुतमिश 1210 से 1236 ई० तक गद्दी पर बना रहा। इस अवधि में उसने सर्वप्रथम विरोधियों से शक्ति समाप्त कर अपनी स्थिति सुदृढ़ की (1210-20)। उसका दूसरा कार्य मंगोल आक्रमणकारियों से राज्य की सुरक्षा करना था (1221-27)। तीसरे चरण (1228-36) में उसने अपनी शक्ति का विस्तार किया तथा प्रशासनिक संगठन पर ध्यान दिया।

प्रथम चरण -

इल्तुतमिश द्वारा अपने प्रतिद्वंद्वियों का दमन—यल्दूज़ का पतन—सुल्तान बनने के साथ ही इल्तुतमिश ने सर्वप्रथम अपने प्रतिद्वंद्वियों से निपटने की योजना बनाई। इल्तुतमिश के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती यल्दूज़ की थी। मध्य एशिया में ख्वांरिज्मशाह के बढ़ते प्रभाव से यल्दूज़ की गजनी पर अधिकार बनाए रखने में कठिनाई हो रही थी, इसलिए उसके आगे दिल्ली पर अधिकार करने की ही बीच ख्वांरिज्मशाह ने गजनी पर अधिकार कर, यल्दूज़ को भागने पर मजबूर किया। गजनी से वह लाहौर पहुँचा। लाहौर पर उसने अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया।

कुबाचा ने लाहौर छोड़ दिया। तत्पश्चात् यल्दूज़ पंजाब से थानेसर तक के प्रदेश पर अधिकार कर दिल्ली-विजय की योजना बनाने लगा। यह स्थिति इल्तुतमिश के लिए अत्यंत घातक थी। अब वह और अधिक यल्दूज़ की उपेक्षा नहीं कर सकता था। यल्दूज़ को रोकने के लिए दिल्ली से आगे बढ़ा। 1215-16 में तराइन के युद्ध में यल्दूज़ पराजित हुआ। उसे बंदी बनाकर बदायूँ भेज दिया गया और वहीं उसकी हत्या करवा दी गई। यल्दूज़ की मृत्यु के साथ ही इल्तुतमिश का प्रबलतम प्रतिद्वंद्वी समाप्त हो गया। प्रो० निज़ामी के शब्दों में, "इल्तुतमिश के लिए यह दोहरी विजय थी। उसकी सत्ता का लोहे का दरवाजा सबसे भयंकर शत्रु का विनाश और गजनी से अंतिम रूप से संबंध-विच्छेद, जिसके फलस्वरूप दिल्ली का स्वतंत्र अस्तित्व निश्चित हो गया।"

कुबाचा का अंत—इल्तुतमिश का दूसरा प्रतिद्वंद्वी कुबाचा था। ऐबक की मृत्यु के पश्चात् सिंध पर अधिकार कर कुबाचा ने अपनी शक्ति सुदृढ़ कर ली थी। बाद में उसने पराजित कर यल्दूज़ से लाहौर पर कब्जा जमा लिया था। यल्दूज़ को पराजित और मार कर लाहौर छोड़कर कुबाचा ने पुनः लाहौर पर नियंत्रण स्थापित कर लिया। इल्तुतमिश ने उसकी शक्ति के दमन के लिए 1217 ई० में लाहौर पर आक्रमण कर दिया। कुबाचा पराजित होकर भागा। खदेड़ा जाकर इल्तुतमिश ने अपने पुत्र नासिरुद्दीन मुहम्मद को शासक नियुक्त किया। यद्यपि इस संघर्ष में कुबाचा की शक्ति को चोट पहुँची, परंतु उसकी शक्ति पूरी तरह नष्ट नहीं हुई। वस्तुतः इल्तुतमिश मंगोल आक्रमण के संभावित खतरे को ध्यान में रखकर कुबाचा की तरफ ध्यान नहीं दे सका। मंगोलों के वापस जाने के पश्चात् उसने पुनः कुबाचा की तरफ ध्यान दिया। 1226 ई० में उसने भटिंडा, सरसुती और लाहौर पर अधिकार कर लिया तथा उच्च सिंध की तरफ बढ़ा। कुबाचा भयभीत होकर भागा हुआ। उसने अपने पुत्र बहram को संधि का प्रस्ताव लेकर इल्तुतमिश के पास भेजा, जिसे उसने

अस्वीकार कर दिया। निराश होकर कुबाचा ने नद में डूबकर आत्महत्या कर ली। इल्तुतमिश ने सिंध और अनेक सीमावर्ती इलाकों पर अधिकार कर अपना प्रभाव-क्षेत्र दूर तक विस्तृत कर लिया।

द्वितीय चरण

मंगोल-आक्रमण का खतरा : मंगोलों से संघर्ष—इल्तुतमिश की मंगोलों के संभावित आक्रमण का सामना भी करना पड़ा। तेरहवीं शताब्दी में मंगोल-विजेता चंगेज़ खाँ ने समस्त मध्य एशिया को अपने पैरों तले रौंदकर अपनी धाक जमा ली थी। मध्य एशिया के अनेक नरेश और राजवंश मंगोलों से पराजित कर दिए गए थे। ख्वारिज्म के शाह को भी मंगोलों के प्रकोप भुगतना पड़ा। मंगोलों ने ख्वारिज्म साम्राज्य पर अपना अधिकार जमा लिया। ख्वारिज्मशाह का पुत्र जलालुद्दीन मंगोलों से पराजित अपना राज्य छोड़कर भाग खड़े हुए। शाह कैस्पियन तट की तरफ और मंगोल सेना सिंधु नदी की तरफ दौड़ी। चंगेज़ खाँ भी उसका पीछा करता हुआ सिंधु नदी तक आकर रुक गया। उसने संभवतः इल्तुतमिश की यह निर्देश भी दिया कि वह जलालुद्दीन की सहायता नहीं करे। यह एक प्रकार की चेतावनी भी थी। अतः जब मंगोलों ने अपने दूत के माध्यम से इल्तुतमिश से सहायता की याचना की, तो इल्तुतमिश ने उसके दूत की हत्या करवा दी तथा मंगोलों के वापस जाने की राह देखी। कुछ मंगोलों ने उसके राज्य की सीमा में अचानक प्रवेश कर लिया एवं पंजाब तथा सिंध में अपना आतंक स्थापित करना चाहा। बामियाँ होकर सिंध में मंगोलों की पराजय हुई, परंतु इल्तुतमिश के आगमन की खबर सुनकर मंगोल भारत से चले गए (1228 ई०)। चंगेज़ भी उसका पीछा करना चाहता हुआ वापस हो गया। इल्तुतमिश ने इस प्रकार नव-स्थापित राज्य को मंगोल-आक्रमणकारियों से सुरक्षा की।

तृतीय चरण

सैनिक अभियान : बिहार-बंगाल पर विजय—अपने प्रतिद्वंद्वियों का सफाया करने और मंगोल-आक्रमणकारियों के संभावित आक्रमण से मुक्त होकर इल्तुतमिश ने अपना ध्यान राज्य-विस्तार एवं सुदृढीकरण की तरफ लगाया। सबसे पहले उसने बंगाल की तरफ ध्यान दिया। ऐबक की मृत्यु के पश्चात् खिलजी अमीर अली मर्दान ने लखनौती का स्वतंत्र सरदार अलाउद्दीन खिलजी को समाप्त कर स्वयं बंगाल का शासक बन बैठा। उसने गयासुद्दीन की उपाधि धारण कर अपने प्रभुत्व का विस्तार किया। उसने बिहार में अपनी शक्ति का विस्तार किया तथा जाजनगर, तिरहुत, कामरूप और लखनौर के राज्यों से कर वसूला। इल्तुतमिश के लिए उसे दबाना आवश्यक हो गया था, क्योंकि वह दिल्ली सल्तनत के अधीन दक्षिणी बिहार का महत्वपूर्ण भाग था। इल्तुतमिश ने कुतुबद्दीन के शासनकाल में ही महत्वपूर्ण सैनिक योग्यता का परिचय दिया था तथा सैनिक शक्ति का प्रदर्शन कर वह दिल्ली के अमीरों तथा शासकों के मध्य अपना विशिष्ट स्थान बना चुका था। इल्तुतमिश को अपनी सत्ता सुरक्षित करने का अच्छा अनुभव था। इल्तुतमिश ने अपनी सेना को संगठित किया तथा लखनौती पर आक्रमण करने का आदेश दिया। 1226 ई. में इल्तुतमिश ने लखनौती पर आक्रमण कर हिसामुद्दीन को मार डाला। महमूद बंगाल का मुक्ता (प्रांतीय गवर्नर) नियुक्त किया गया। महमूद की मृत्यु के पश्चात् पुनः अव्यवस्था फैली। अतः 1230 ई. में इल्तुतमिश ने बंगाल पर आक्रमण कर शांति-व्यवस्था स्थापित की तथा अलाउद्दीन जानी को बंगाल का गवर्नर बहाल किया। बंगाल अब सल्तनत का एक सूबा बन गया।

राजपूत राज्यों से संघर्ष—इल्तुतमिश ने अब राजपूतों की तरफ अपना ध्यान दिया। राजपूत शासकों ने पहले की तरह बगावत कर दिया था। उन्होंने कर देना बन्द कर दिया था। अपनी शक्ति को संगठित कर राज्यों की तथा तुर्की सत्ता समाप्त करने का प्रयास कर रहे थे। इन विद्रोही राजपूत राज्यों (चंदेलों, प्रतिहारों, चौहानों इत्यादि) पर अपनी धौंस जमाना इल्तुतमिश अपना आवश्यक था। अतः राजपूत राज्यों को परास्त करने की योजना बनाई गई। इल्तुतमिश ने 1226 ई. में रणथंभौर और 1227 ई. में मंदौर पर विजय हासिल की। तदोपरांत उसने जालौर, अजमेर, बयाना, ग्वालियर, नरवर, मालवा इत्यादि राज्यों पर अधिकार किया। 1233 ई. में उसने कालिंजर पर भी आक्रमण किया और

उसे समर्पण पाई, यद्यपि वह सफलता अस्थायी थी। उसने 1235-36 के मध्य नागदा, उज्जयिनी, भिलसा एवं चंदेरी पर भी आक्रमण कर उन्हें लूटा। गुर्जरातों पर भी उसने आक्रमण किया, परंतु उसे जीतने में वह सफल नहीं हो सका।

दोआब की विजय—दोआब की स्थिति भी असंतोषजनक थी। सल्तनत ने पर्याप्त अर्थव्यवस्था का लाभ उठाकर अनेक राज्य स्वतंत्र हो चुके थे। इल्तुतमिश ने बदायूँ, कन्नौज, बनारस, हरदोई, अवध, संभल और सिरहुत पर पुनः अपना अधिकार स्थापित किया। विद्रोही जमींदारों को दंड देने के लिए विशेष सैनिक अभियान किए। राज्यों की आंतरिक स्थिति को सुदृढ़ करने के लिए सेना की बहाली की गई। इन सैनिक अभियानों के कारण न केवल सल्तनत की स्थिति सुदृढ़ हुई बल्कि उसकी सीमा भी विस्तृत हुई। दोआब पर आर्थिक और प्रशासनिक नियंत्रण भी सुदृढ़ किया गया।

सीमांत-प्रदेश की सुरक्षा—इल्तुतमिश ने पश्चिमोत्तर सीमांत-प्रांत की सुरक्षा की भी व्यवस्था की। इस क्षेत्र में फैले खोखरों के विद्रोह को दबाने एवं शांतिव्यवस्था के लिए उसने सेना भेजी। सेना ने स्वालिक, जालंधर और नंदना पर अधिकार कर वहाँ शांति-व्यवस्था स्थापित की; परंतु इसी अभियान के दौरान 1236 ई० में इल्तुतमिश की मृत्यु हो गई।

ख़िलाफ़त से स्वीकृति-पत्र प्राप्त होना—इल्तुतमिश के राज्यकाल की एक प्रमुख घटना है बग़दाद के ख़लीफ़ा से सुल्तान के पद की वैधानिक मान्यता प्राप्त करना। दिल्ली के तुर्की शासकों के बावजूद ख़िलजी ख़लीफ़ा को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उन्होंने ख़लीफ़ा के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं किया। उन्होंने अपने दूतों के माध्यम से 1229 ई० में ख़लीफ़ा अल-मुस्तसिर बिल्लाह को दिल्ली का वैधानिक एवं स्वतंत्र सुल्तान स्वीकार कर लिया। इल्तुतमिश को नासिर-अमीर-उल-मोमिनिन (मुसलमानों का प्रधान तथा ख़लीफ़ा का सहायक) की उपाधि प्रदान की गई। इसके कारण इल्तुतमिश वैधानिक रूप से सुल्तान बन गया, उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गई एवं उसके विरोधी शांत हो गए।

प्रशासनिक व्यवस्था—इल्तुतमिश ने अपने राज्य का विस्तार कर उसे संगठित करने का भी प्रयास किया। इस उद्देश्य से उसने प्रचलित प्रशासनिक व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन किए। अब तक तुर्की राज्य का प्रशासनिक स्वरूप बहुत हद तक सैनिक व्यवस्था पर ही आश्रित था। विजित क्षेत्रों पर सैनिक अधिकारियों की नियुक्तियाँ की जाती थीं, जो राजस्व वसूल करते थे। अनेक इलाकों में शांति-व्यवस्था स्थापित करने का कार्य करते थे। यह व्यवस्था सुदृढ़ नहीं थी। प्रशासन का शासक से सीधा संबंध नहीं रहने से शासक प्रांतों के सैनिक अधिकारियों के विद्रोह का शिकार होता रहता था। इस व्यवस्था में परिवर्तन करने के लिए इल्तुतमिश ने अनेक महत्त्वपूर्ण उपाय किए।

सल्तनत को संगठित एवं सुदृढ़ किया—इल्तुतमिश ने सुल्तान की शक्ति को सर्वोपरि स्थापित करने का प्रयास किया। इसलिए, विरोधी अमीरों के महत्त्वपूर्ण पदों से अपने विश्वसनीय व्यक्तियों को बहाल करने की योजना उसने बनाई। उसने अपने विश्वस्त गुलामों की कई टुकड़ियों (चालीस गुलामों का दल) की स्थापना की। राज्य के विशिष्ट महत्त्वपूर्ण पदों पर इन्हें ही नियुक्त किया। विरोधी अमीरों का दमन कर दिया गया, उनकी संपत्ति जब्त कर ली गई तथा उनमें से अनेक को मौत के घाट उतार दिया गया। इल्तुतमिश के इस कार्य से विरोधी अमीरों पर सुल्तान का प्रभाव और आतंक स्थापित कर दिया। प्रशासन के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में भी इल्तुतमिश द्वारा स्थापित नव-तुर्की राज्य सुल्तान के ऊपर आश्रित हो गया।

ऐबक की भांति इल्तुतमिश ने भारतीय और विदेशी मुसलमानों में विभेद नहीं किया तथा जिन इलाकों में विद्रोह या अशांति की संभावना थी, उन क्षेत्रों में तुर्की अधिकारियों एवं सैनिकों को नियुक्त किया गया। इल्तुतमिश ने ईरानी राजतंत्र के सिद्धांतों को भारत में प्रतिपादित करने का प्रयास किया। उसने वंशानुगत राजतंत्र के सिद्धांत को भी अपनाया और अपने जीवनकाल में ही अपने उत्तराधिकारी रजिया का मनोनयन किया। हबीब और निज़ामी के अनुसार, "इल्तुतमिश ने एक ऐसे राज्य की स्थापना की जो पूर्णरूपेण भारतीय था, किंतु जिसके एकमात्र उच्चपदीय

अधिकारी तुर्क, ताजिक और ताजिक थे।" इल्तुतमिश की शक्ति का आधार उसके दास अधिकारी और कुलीनवर्गीय तुर्क थे। फखरुद्दीन इसी (फ़ख़र-ए-मुदब्बिर) जैसे धार्मिक विद्वान इल्तुतमिश के प्रमुख मुसाहिब, बुद्धिजीवी और कानूनी मसलों पर उसे आवश्यक सलाह देते थे। उसके दरबार में सैय्यद नूरुद्दीन मुहम्मद बुखारी, कुतुलमुल्क हसन गंगी, अमीरुल उमरा, 'वज़ीर ख्वाजा ख़िरा' उल-मुल्क जुनैदी जैसे सामीलिक हज़रात उसके प्रशासक, अभिजात वर्ग, मंत्री एवं अन्य प्रसिद्ध लोग इल्तुतमिश के दरबार में आए। उनकी उपस्थिति से उसके दरबार को वैभव और स्तर इतना बढ़ गया कि वह महमूद और उसके दरबारों के समान दिखाई देने लगा।

इक्तादारी व्यवस्था की स्थापना—इल्तुतमिश का एक महत्वपूर्ण योगदान इक्तादारी व्यवस्था की स्थापना करना था। उसने पूरे राज्य को छोटी-छोटी इकाइयों में विभक्त कर दिया। इन इकाइयों को इक्ता की संज्ञा दी गई। इनके अधिकारी इक्तादार कहलाते थे। इक्तादारों को विभिन्न श्रेणियाँ थीं। बड़े इक्तादार प्रांतीय गवर्नर के रूप में काम करते थे। छोटे इक्तादार केवल सैनिक कार्य करते थे। इक्तादार अपनी इक्ता वसूली का काम भी देखते थे। छोटे इक्तादार केवल सैनिक कार्य करते थे। इक्तादारों को उनकी सेवा के बदले में अपने-अपने क्षेत्र से लगान वसूलने का अधिकार दिया गया जिसका कुछ भाग वे अपने खर्च के लिए रख सकते थे। इक्तादारी व्यवस्था के पहले की अराजकता समाप्त करने का सामर्थ्य रखती थी। इक्तादारों का नियंत्रण सुस्थापित किया गया। सामंती व्यवस्था पर उनका प्रभाव दीखता था। यह व्यवस्था केंद्रीय शक्ति को मजबूत करने में सहायक होती थी।

सैनिक एवं न्यायिक सुधार—सैनिक-व्यवस्था एवं न्याय-प्रणाली में भी इल्तुतमिश ने सुधार किए। उसने शाही सेना का स्वरूप निश्चित किया। सेना में बहाली करते समय योग्य व्यक्तियों को ही स्थान दिया गया। सेना के रख-रखाव और सैनिकों के अस्त्र-शस्त्र देने की व्यवस्था की गई। सेना के अधिकारियों को सेना के बदले नकद वेतन न देकर जागीर देने की प्रथा आरंभ हुई। यद्यपि कालांतर में इस व्यवस्था के परिणाम घातक निकले; तथापि तत्कालीन परिप्रेक्ष्य में इस व्यवस्था के सैनिकों को वफादारी प्राप्त हुई।

इल्तुतमिश ने उचित न्याय के संपादन के लिए दिल्ली एवं अन्य प्रमुख नगरों में काज़ी एवं अमीरदाद नामक पदाधिकारियों की नियुक्ति की, जो मुकदमों का निपटारा करते थे। इनके फैसलों के विरुद्ध प्रधान काज़ी के पास अपील की जा सकती थी; परंतु सुल्तान ही अंतिम एवं सर्वोच्च न्यायाधीश था। सुल्तान न्याय की स्थापना के लिए सदैव तत्पर रहता था।

मुद्रा में सुधार—इल्तुतमिश का एक अन्य कार्य था प्रचलित मुद्रा-व्यवस्था (टकसालों) में परिवर्तन करना। उससे प्रचलित सिक्कों की जगह पर अरबी ढंग के टंका चलवाया। ये सोने और चाँदी के बनते थे, जिनका वज़न 175 ग्रेन था। टंका पर ख़लीफ़ा का नाम भी खुदवाया गया था। ये सिक्के सिर्फ राजकीय टकसाल में ही ढाले जा सकते थे। टंकों पर टकसाल का नाम खुदवाने की प्रथा भी इल्तुतमिश ने आरंभ की। टंके के अतिरिक्त पीतल के जीतल भी जारी किए गए। इन सिक्कों को जारी कर इल्तुतमिश ने अपनी सत्ता के सुदृढ़ीकरण का प्रमाण दिया।

इल्तुतमिश के कार्यों का समीक्षा—आर्यिक तुर्क सुल्तानों में इल्तुतमिश का महत्वपूर्ण स्थान है। उसने कुतुबुद्दीन ऐबक के अधूरे कार्यों को पूरा किया। प्रो० ईश्वरी प्रसाद इल्तुतमिश को ही गुलामवंश का 'वास्तविक संस्थापक' मानते हैं। डॉ० आर० पी० त्रिपाठी का भी मत है कि "भारतवर्ष में मुस्लिम प्रभुसत्ता का वास्तविक संगठन उसी के हाथों से देश को एक राजधानी, स्वतंत्र राज्य, राजतंत्रात्मक शासन और शासक वर्ग प्रदान किया।" अनेक इतिहासकारों ने इल्तुतमिश में सैनिक, प्रशासनिक एवं व्यक्तिगत गुणों की प्रशंसा की है। प्रो० हबीबुल्ला के शब्दों में, "ऐबक ने दिल्ली सल्तनत की सीमाओं और उसकी संप्रभुता की रूपरेखा बनाई। इल्तुतमिश, निस्संदेह उसका पहला सुल्तान था।" प्रो० निज़ामी ने इल्तुतमिश के कार्यों की प्रशंसा की है। उनका कहना है कि "ऐबक ने दिल्ली सल्तनत को रूपरेखा के बारे में सिर्फ

दिग्दर्शन प्रस्तुति कराई। इल्तुतमिश ने उसे एक व्यक्तित्व, एक पद, एक प्रशासनिक, एक देश, एक शासन-व्यवस्था और एक शासक-वर्ग प्रदान किया।" विभिन्न परिस्थितियों से जूझते हुए उसने तुर्की राज्य को स्थायित्व प्रदान किया। वह एक कुशल सेनापति, वीर विजेता, दूरदर्शी एवं न्यायविद शासक तथा कला एवं साहित्य का संरक्षक था। कला के क्षेत्र में उसकी सबसे बड़ी देन ऐबक के अधूरे कुतुबमीनार को पूरा करवाना था। उसके समय में दिल्ली का सांस्कृतिक विकास हुआ। वह सांस्कृतिक केंद्र बन गया जहाँ मध्य एशिया से आनेवाले विद्वानों और कलाकारों का प्रश्रय मिला। वास्तव में, भारत में तुर्की शासन का वास्तविक संस्थापक इल्तुतमिश ही था। भारत में 'मुस्लिम प्रभुसत्ता का वास्तविक संगठन' इल्तुतमिश से ही होता है। इल्तुतमिश के द्वारा आरंभ किए गए कार्यों को पूरा करके उसकी सबसे बड़ी उपलब्धि थी नवस्थापित तुर्की सल्तनत को विघटन से बचा कर उसकी सुरक्षा करना। जबकि मध्य एशिया के अनेक राज्य मंगोल आक्रमणकारियों द्वारा नष्ट कर दिए गए इल्तुतमिश ने अपनी कूटनीति और साहस से भारत में तुर्की राज्य को मंगोल आक्रमण के खतरे से सुरक्षा की। उसने दिल्ली सल्तनत को गजनी के प्रभाव से मुक्त कर एक स्वतंत्र राज्य के रूप में स्थापित किया।

फ़िरोज़शाह : 1236 (Firoz Shah)

इल्तुतमिश ने अपनी मृत्यु के पूर्व अपनी राज्य अपनी पुत्री रजिया को सौंपने की इच्छा व्यक्त की थी। इसका कारण यह था कि उसके योग्य और बड़े पुत्र, नासिरुद्दीन महमूद के अतिरिक्त और मुईजुद्दीन भी हो चुके थे तथा छोटा पुत्र रुकनुद्दीन फ़िरोज़शाह एक दुर्बल और अक्षम व्यक्ति था। दुर्भाग्यवश इल्तुतमिश की यह इच्छा पूरी नहीं हो सकी। तुर्की अमीर एक स्त्री को राज्य करते हुए देखना अपना अपमान समझते थे। अतः अनेक तुर्की अमीरों, फ़िरोज़शाह की माता (शाहतुर्कान) और अनेक अफ़ग़ानों ने षड्यंत्र कर रुकनुद्दीन फ़िरोज़शाह को 1236 ई० में सुल्तान घोषित कर दिया।

फ़िरोज़शाह सुल्तान तो बन गया, परंतु वह राज्य पर नियंत्रण नहीं रख सका। वास्तविक सत्ता शाहतुर्कान के हाथों चली गई। वह एक धूर्त महिला थी। उसने तुर्की अमीरों और राजपरिवार के सदस्यों को अपमानित एवं आतंकित करना आरंभ कर दिया। इल्तुतमिश के छोटे पुत्र कुतुबुद्दीन को अंधा करवाकर उसकी हत्या करवा दी गई। प्रशासन पर नियंत्रण ढीला पड़ गया। जनता पर भी अत्याचार होने लगे। फलतः पूरे राज्य में असंतोष एवं विद्रोह छा गया। फ़िरोज़शाह को अपने भोग-विलास से ही छुट्टी नहीं थी; परंतु जब लगातार लाहौर, मुलतान, हांसी और बदायूँ में सूबेदारों का विद्रोह आरंभ हुआ, तब फ़िरोज़शाह को बाध्य होकर अपनी तंद्रा तोड़नी पड़ी। इस बीच सारे विद्रोही अपनी सेना के साथ दिल्ली की तरफ बढ़े। वज़ीर जुनैदी भी अनेक अधिकारियों के साथ विद्रोहियों से मिल गया। हताश सुल्तान दिल्ली छोड़कर विद्रोहियों का सामना करने के लिए आगे बढ़ा।

दिल्ली में सुल्तान की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर रजिया लाल वस्त्र पहनकर (न्याय की माँग का प्रतीक) नमाज़ के अवसर पर जनता के सम्मुख उपस्थित हुई। उसने शाहतुर्कान के अत्याचारों एवं राज्य में फैली अव्यवस्था का बखान किया तथा आश्वासन दिया कि शासक बनकर वह शांति एवं सुव्यवस्था स्थापित करेगी। रजिया से तुर्क अमीर और अन्य व्यक्ति प्रभावित हो उठे। क्रुद्ध जनता ने राजमहल पर आक्रमण कर शाहतुर्कान को गिरफ़्तार कर लिया एवं रजिया को सुल्तान घोषित कर दिया। फ़िरोज़शाह जब विद्रोहियों से भयभीत होकर दिल्ली पहुँचा तब उसे भी कैद कर लिया गया और उसकी हत्या कर दी गई। नवंबर, 1236 ई० में रजिया सुल्तान के पद पर प्रतिष्ठित हो गई।

